'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ९५ | वाराणसी, शनिवार, २२ अगस्त, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

श्रीनगर (कश्मीर) ३-८-'५९

सर्वोदय-विचार केवल अच्छा ही नहीं, व्यावहारिक भी है

प्लानिंग कहाँ होगी ?

आज हम शंकराचार्य के *टीले पर गये थे। वहाँसे हमने आठ हिस्सों में बँटे हुए श्रीनगर शहर को देखा। यहाँ बैठकर वैसा कुछ भी दर्शन नहीं होता है। ऊपर जाने पर कुल का दर्शन होता है, नीचे रहकर जुज (अंश) का ही दर्शन होता है। अगर हम ऊपर नहीं चढ़ते हैं, नीचे ही रहते हैं तो हमारी नजर तंग बन जाती है। अगर हम ऐसी नजर-कोताई रखकर प्लानिंग करेंगे तो बिलकुल गलत प्लानिंग करेंगे। इसलिए प्लानिंग करनेवालों को सेक्रेटरिएट में नहीं बैठना चाहिए। शंकराचार्य के टीले पर बैठ कर प्लानिंग करनी चाहिए। प्लानिंग करने के बाद फिर काम करने के लिए नीचे उतरना होगा। टीले पर खेती नहीं हो सकती, इसलिए खेती करने के लिए नीचे आना होगा। लेकिन सोचने के लिए ऊपर चढ़ना होगा। खुदा ने इन्सान की शक्ल ऐसी ही बनायी है। उसका दिमाग ऊपर, आसमान में है और पाँव है नीचे जमीन पर। इन्सान के जिस्म का जितना कम हिस्सा जमीन को छूयेगा, उतना वह ऊँचा उठेगा। अगर इन्सान सोयेगा तो उसका सारा जिस्म जमीन के साथ जुड़ा रहेगा। तब वह कलियुग में जायगा।

कृति का युग

वेदों में कहा है 'कलिः शयानो भवति' जब वह बैठता है तो उसके जिस्म का ज्यादा हिस्सा आसमान में हो और थोड़ा जमीन पर हो, तब वह द्वापर युग में जायगा। 'संजिहानस्तु द्वापरः।' फिर जब वह खड़ा हो जाय है तो सिर्फ उसके पाँव जमीन को छूयेंगे याने कम से कम हिस्सा छूयेगा और ज्यादा हिस्सा आसमान में रहेगा, इसलिए वह राम के युग में चला है "उत्तिष्ठन् त्रेता भवति।" आखिरी युग, आदर्श युग है—कृतयुग। इन्सान जब चलता है तब कृतयुग में चला जाता है। 'कृतं संपद्यते चरन्'। इसीलिए बाबा रोज चलता है और चलते समय एक सेकंड, क्षण ऐसा आता है, जब दोनों पाँव आसमान में आ सकते हैं और दौड़ने में तो दोनों पाँव आसमान में आते ही हैं। चलना दिमाग के लिए बड़ा मुफीद है। मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि चलने से दिमाग साफ, तेज बनता है क्योंकि सारा जिस्म आसमान में आता है और जमीन से कम-से-कम ताल्लुक रहता है। इसीलिए सोचने के लिए शंकराचार्य के टीले पर जाना चाहिए और काम करने के लिए नीचे उतरना चाहिए। खिदमत तो अपने देश की, सूबे की, जिले की या गाँव की करनी चाहिए, लेकिन जब प्लानिंग करने बैठेंगे तो कुल दुनिया को सामने रखकर, अपने को दुनिया का बादशाह समझकर मन्सूबा (प्लान, योजना) करना चाहिए, तभी मन्सूबा ठीक बनेगा। जो देश छोटी नजर रखकर मन्सूबा बनायेगा, उसका मन्सूबा ठीक नहीं बनेगा।

गाँव एक पूर्ण इकाई है

इसीलिए सर्वोदय में हम कहते हैं कि गाँव एक परिपूर्ण, मुकम्मिल चीज है, टुकड़ा नहीं है। गाँव-गाँव टुकड़ा है और ऐसे मुख्तलिफ टुकड़े इकट्ठा कराके पूरा देश बनेगा, ऐसा नहीं, बल्कि 'पूर्णमदः पूर्णमिदम्'। यह भी पूर्ण है, वह भी पूर्ण है। और सब मिलकर परिपूर्ण बनाना है, यह सर्वोदय का मन्सूबा है। हम कहते हैं कि हर गाँव अपना मन्सूबा बनाये। देहात का मन्सूबा देहली नहीं बनायेगी, देहात ही बनायेगा। इसपर यही सवाल पैदा होता है कि क्या ऐसा हो सकता है ? आज हमारी युवराजजी (युवराज कर्णसिंह, सदरे-रियासत) से बातें हो रही थीं। उन्होंने कहा कि 'ऐसा हो तो बहुत अच्छा होगा, लेकिन क्या नीचे ताकत दी जा सकेगी ?' मैंने कहा कि नीचे ताकत दी नहीं जा सकेगी, ताकत ली जायगी। आजादी कभी दी नहीं जा सकती, ली जा सकती है। आप कौन हैं किसीको आजादी देनेवाले ? इसलिए इन्सान को इसके लिए तैयार करना होगा कि तुम अपनी जगह मुकम्मिल हो, इसलिए मुकम्मिल बनकर अपना मन्सूबा बनाओ। इसका मतलब यह नहीं कि एक गाँव का दूसरे गाँव से ताल्लुक ही नहीं रहेगा।

चीनी फिलॉसफर (दार्शनिक) लाओत्से ने गाँव के लिए

* श्रीनगर में एक ऊँचे टीले पर शिवजी का मंदिर है, जिसकी स्थापना शंकराचार्य ने की थी और कहा जाता है कि उस टीले को शंकराचार्य-हिल कहते हैं। विनोबाजी सुबह उस टीले पर घूमने गये थे।

अच्छा मन्सूबा बनाया, जिसमें कहा कि गाँव अपनी सब जरूरतें पूरी कर लेता है, दूसरे गाँवों पर निर्भर नहीं है। दूसरे गाँवोंवाले बड़े खुशहाल हैं, लेकिन उन्हें पता चलता है कि नजदीक कोई गाँव है, क्योंकि रात को उन्हें दूर से कुत्तों के भोंकने की आवाज सुनायी देती है। जहाँ कुत्ते होते हैं, वहाँ इन्सान होना ही चाहिए, इसलिए वे अंदाजा लगाते हैं कि नजदीक ही कोई गाँव होना चाहिए। याने उन्होंने उस गाँव को देखा भी नहीं। इतने सेल्फकन्टेन्ड गाँव की जो तस्वीर उन्होंने खींची है, वह हमारी तस्वीर नहीं है। हम कोऑपरेशन (सहयोग) चाहते हैं, लेकिन लंगड़े और अंधे का सहयोग नहीं चाहते हैं। अंधपंगुन्याय के मुताबिक अंधे के कंधे पर लंगड़ा बैठता है। अंधा चलता है और लंगड़ा उसे मार्गदर्शन करता है। आज दुनिया में यही चल रहा है। शहरवाले लोग लंगड़े हैं और देहातवाले अंधे। शहरवाले, देहातवालों के कंधों पर बैठे हैं और देहातवाले भी समझते हैं कि शहरवालों के बिना हमारा नहीं चलेगा। वे हमारे कंधे पर बैठें। यह भी एक किस्म का सहयोग है। अंधे में और लंगड़े में मुख्तलिफ सिफत है। दोनों अधूरे हैं और दोनों मिलकर पूरे बनते हैं। लेकिन सहयोग का दूसरा तरीका है। वह यह है कि दोनों पूरे हों और उनका सहयोग हो। हम अंधे और लंगड़े का सहयोग नहीं चाहते। हम सहयोग जरूर चाहते हैं, लेकिन साथ साथ यह भी चाहते हैं कि गाँव-गाँव अपने पाँव पर खड़ा हो जाय और अपना मन्सूबा बनाये। यह तभी हो सकेगा, जब गाँव में जमीन की मालकियत मिटेगी और गाँव का एक कुनबा बनेगा।

मालकियत मिटाने के लिए मेरा जन्म हुआ है

मैंने माना है कि यही चीज फैलाने के लिए, जमीन की मालकियत मिटाने के लिए ही मेरा जन्म हुआ है। जब तक वह मिटता नहीं, तब तक धर्म नहीं पनपेगा। इन्सान जमीन का मालिक नहीं हो सकता है। मैं इस्लाम की भाषा में कहता हूँ कि हम जमीन के मालिक बनने का दावा करते हैं तो अल्ला के साथ शिरकत करते हैं। इसीलिए जमीन के मालिक बनने का दावा करना कुफ्र है, नास्तिकता, अधर्म है, यह मैंने जाहिर किया है। मैं मानता हूँ कि इस चीज को हमें कबूल करना होगा।

सहयोगी खेती लादी न जाय

जमीन की मालकियत मिटाने के मानी क्या हैं, जरा समझ लीजिये। मेरा यह कतई इरादा नहीं है कि कलेक्टिव फार्मिंग (सामूहिक खेती) या कोआपरेटिव फार्मिंग (सहयोगी खेती) लादी जाय। मेरा इरादा है कि कोआपरेशन (सहयोग) हो, जो एक गुण, सिफत है, अखलाकी चीज है। जो रूहानियत के साथ जुड़ी है, उसके बिना हम टिक सकते हैं। सहयोग की माँग एक बाजू से विज्ञान करता है और दूसरी बाजू से रूहानियत कहती है, 'मैं मेरा' छोड़ो, 'हम हमारा' कहो। 'मैं मेरा' कहने से तुम टुकड़ा, जुज बनाते हो। उससे अहंकार बढ़ता है, जिसमें तुम बहुत खोते हो। इसलिए उसे छोड़ो। विज्ञान यही चीज कहता है कि तुम विज्ञान की ताकत को इस्तेमाल करना चाहते हो, उसका फायदा उठाना चाहते हो तो तुम्हें अलग-अलग खिचड़ी पकाना छोड़ना होगा। इस तरह 'मैं मेरा' वाली बात पर एक बाजू से रूहानियत हमला करती है और दूसरी बाजू से विज्ञान हमला करता है। विज्ञान कहता है कि 'मेरा खेत, मेरा घर' यह सब छोड़कर 'हमारा' कहो, तभी विज्ञान का गाँव-गाँव को उपयोग हो सकता है और विज्ञान के जरिये हम जिंदगी का अच्छा नमूना पेश कर सकते हैं। विज्ञान को हम जैसा विकसित करना चाहते हैं, कर सकते हैं।

कुदरत का आनंद

कुछ लोग कहते हैं कि हमारा आदर्श यह है कि गाँव-गाँव में डाक्टर हो। मैं कहता हूँ कि आदर्श गाँव में डाक्टर का मनहूस चेहरा देखने को नहीं मिलेगा। गाँव-गाँव में डाक्टर हो, इसके मानी है कि घर-घर में बीमारी हो। क्या विज्ञान के जमाने में बीमारी रहेगी? विज्ञान के जमाने में हर बीमारी के लिए दवा तैयार रहेगी, लेकिन बीमारी तैयार नहीं रहेगी। आज न्यूयार्क, वाशिंग्टन के बड़े लोग 'वीक एन्ड' के लिए शहर छोड़कर अपने फार्म (खेत) पर जाते हैं। जहाँ खुली हवा में कुदरत के साथ दो दिन बिताते हैं। यह एक बहुत अच्छी बात है। जब विज्ञान आगे बढ़ेगा, तब उनके ध्यान में आयेगा कि 'वीक एन्ड' नहीं, बल्कि पूरा 'वीक' (हफ्ता) ही खेत पर बिताना चाहिए। न्यूयार्क में पचास मंजिलवाले मकान में रहना पड़ता है। जहाँ न अच्छी हवा मिलती है, न सूरज का दर्शन होता है। मैं जब जेल में था तो वहाँका जेलर मुझे हमेशा खुश देखता था। एक दिन उसने मुझसे कहा: 'आप तो बिलकुल बादशाह जैसे रहते हैं। आपको कोई दुःख नहीं है?' मैंने उनसे कहा कि आपकी कृपा से मुझे और कोई दुःख नहीं है, सिर्फ एक दुःख है। जब उन्होंने पूछा कि क्या दुःख है तो मैंने कहा कि आप ही इस पर सोचिये और सात दिन के बाद मुझे बताइये। सात दिन के बाद उन्होंने कहा कि मुझे नहीं सूझता है, आप ही बताइये। मैंने कहा कि यहाँपर मुझे केवल एक ही दुःख है कि सूरज को उगते और डूबते नहीं देख सकता हूँ। जिस जिंदगी में सूरज के उगने और डूबने का दर्शन नहीं होता है, उस जिंदगी पर लानत है। शरीरवालों को वह दर्शन नहीं होता है, इसलिए वे अपने घर में सूर्योदय के फोटो रखते हैं और अपने टेबल पर कागज के फूल रखते हैं। मैं कहना यह चाहता हूँ कि जब विज्ञान का ज्यादा खयाल आयेगा और वह मनुष्य के पास पहुँचेगा, तब खुली हवा की अहमियत ध्यान में आयेगी। फिर शहरवाले पूरा 'वीक' (हफ्ता) ही खेतों पर बितायेंगे। जब ऐसा होगा, तब न्यूयार्क और वाशिंग्टन पर हल चलेगा। क्योंकि वहाँके पचास मंजिलवाले मकानों में कौन रहेगा? जब लोग विज्ञान को समझेंगे, तब सभी लोग माँग करेंगे कि हम खुली हवा में कुदरत के साथ रहना चाहते हैं।

रात्रि की शान्ति का आनंद

लोग मुझे आर्थिक सवाल पूछते हैं कि आपके प्लानिंग में 'स्टॅण्डर्ड आफ लिविंग' (जीवनस्तर) बढ़ेगा या घटेगा? हम जवाब देते हैं कि आपका सवाल अधूरा है। किस चीज का स्टॅंडर्ड बढ़ाना चाहिए और किसका घटाना चाहिए, इसकी तमीज (विवेक) इन्सान के लिए जरूरी है। इन ५० सालों में देश में सिगरेट ज्यादा खपने लगी है तो क्या इसके मानी यह है कि हिंदुस्तान की तरक्की हुई? हवा का स्टॅण्डर्ड घटे और कपड़े का बढ़े तो हम घाटे में हैं या नफे में? स्टॅण्डर्ड जरूर बढ़ना चाहिए, लेकिन दूध, फल, शहद, मेवे, तरकारी वगैरह चीजों का बढ़ना चाहिए, सिगरेट, शराब जैसी चीजों का घटना चाहिए। यहाँ मुझे उत्तम से उत्तम मकान में ठहराया गया है, लेकिन देहात के मकान में मुझे जो आनंद हासिल होता है, वह यहाँ नहीं हुआ। मैं कल रात सोया तो इधर दिये, उधर दिये,

चारों तरफ दिये ही दिये थे। मुझे उनसे अपनी आँख बचा-बचाकर सोने की कोशिश करनी पड़ी। परमात्मा ने सुंदर अँधेरा पैदा किया, जिसमें हमें आनंद, शांति, सुकून महसूस हो, हम आसमान के चमकीले सितारे देख सकें। लेकिन इन लोगों ने अँधेरे को भी आग लगा दी। याने आग लगाने की भी हद हो गयी। यह ठीक है कि जहाँ रोशनी की जरूरत हो, वहाँ वह रहे। कुरानशरीफ में कहा है कि 'खुदा कभी दिन देता है तो कभी रात।' वह कायम के लिए दिन ही दिन या रात ही रात दे तो क्या अच्छा लगेगा? लेकिन दिन के बाद रात और रात के बाद दिन देता है तो वह हमारे लिए अच्छा है। समझना चाहिए कि इन्सान को जितनी जरूरत रोशनी की है, उतनी ही अँधेरे की भी है। लेकिन हम इसे महसूस नहीं करते हैं और रात में भी चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश करते हैं तो क्या यह स्वर्ग की निशानी है? कोई भी 'साइन्टिफिक माइण्ड' (वैज्ञानिक मन) यह कबूल नहीं करेगा कि रात को सोने के समय दिये जले हों। उस समय अँधेरा ही चाहिए। यह भी होगा कि रात को ट्रेनें नहीं चलेंगी। भगवान ने रात सोने के लिए, ध्यान-चिंतन के लिए दी है।

गाँव-गाँव में सिनेमा

एक दफा सर्वोदय-सम्मेलन के समय मुझसे किसीने पूछा कि रात को दो घण्टे सांस्कृतिक कार्यक्रम होगा तो क्या आप उसमें आयेंगे? मैंने कहा कि दो घण्टे का सांस्कृतिक कार्यक्रम मेरे लिए नाकाफी है। मेरा तो ६॥ घण्टे का सांस्कृतिक कार्यक्रम चलता है। रात को ८॥ बजे मैं सो जाता हूँ और तीन बजे उठता हूँ। इन्सान के लिए गाढ़ निद्रा से बढ़कर कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम नहीं हो सकता है। जब हरएक के पास विज्ञान पहुँचेगा तो हर कोई कहेगा कि मेरा रात को सोने का हक है। फिर सब कोई रात को सिनेमा नहीं देखेंगे, बल्कि भगवान ने आसमान में जो तारे, सितारे बनाये हैं, उनको देखेंगे, जिससे दिल पाक बनता है। फिर बच्चे, बूढ़े, भाई, बहनें सब कहेंगे कि रात को हमें अच्छी निद्रा चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि विज्ञान बढ़ेगा तो गाँव-गाँव में सिनेमा और डाक्टर होंगे। हम कहते हैं कि आज चन्द शहरों को ही आग लगी है। लेकिन क्या आप गाँव-गाँव में सिनेमा पहुँचाकर गाँव-गाँव को आग लगाना चाहते हैं? आज विज्ञान उतना बढ़ा नहीं है, इसलिए लोग ऐसा गलत आदर्श रखते हैं। गाँवों में अच्छी चीजें ले जानी चाहिए, बुरी नहीं। 'लिटिल नॉलेज इज ए डेन्जरस थिङ्ग, ड्रिंक डीप ऑर टेस्ट नॉट (थोड़ा ज्ञान बड़ी खतरनाक चीज है। गहरा उतरो या उसे छूओ ही मत)।'

शराब या भजन?

विज्ञान बढ़ेगा तो जिन्दगी कॉम्प्लेक्स (व्यामिश्र) नहीं, बल्कि सिम्पुल (सरल) बनेगी। हमारे साथ एक अंग्रेज मित्र—डोनाल्ड ग्रूम थे। उनसे हमने पूछा कि जैसे हमारे यहाँ हर दूकान में रेडियो चिल्लाता है, क्या लंदन में भी यही होता है। उन्होंने कहा: 'लंदन में तो उसकी मनाही है।' वहाँ विज्ञान काफी आगे बढ़ा है और हमारे यहाँ अभी आया है, इसलिए ऐसा होता है। विज्ञान के जमाने में आज के ढंग नहीं टिकेंगे। विज्ञान के जमाने में प्लानिंग में नम्बर एक की अहमियत इसको मिलेगी कि हर आदमी को खाने के लिए पूरा आसमान मिलना चाहिए। नम्बर दो में हवा, तीन में सूरज की रोशनी, धूप, चार में पानी, पाँच में अनाज, छह में काम करने के लिए औजार, कपड़ा, घर और फिर नम्बर सात में एण्टरटेनमेन्ट (मनोरंजन) की चीजें, भजन आदि मिलनी चाहिए। रविन्द्रनाथ ठाकुर कोई हिन्दुस्तान के जानिबदार (पक्षपाती) नहीं थे, बल्कि सारी दुनिया को एक समझनेवाले थे, उनका दिल और दिमाग बड़ा था। लेकिन उन्होंने हिन्दुस्तान और यूरोप के मजदूरों की तुलना करते हुए कहा कि हमारे देश के मजदूर दिनभर के काम की थकान मिटाने के लिए रातको भजन करते हैं और यूरोप के मजदूर थकान मिटाने के लिए रातको शराब पीते हैं। मैं रूहानियत के खयाल से नहीं, बल्कि विज्ञान के खयाल से पूछ रहा हूँ कि रात को परमात्मा के सुन्दर भजन गाकर सोना ज्यादा साइन्टिफिक (वैज्ञानिक) है या शराब पीना? बाबा की विज्ञान पर इतनी श्रद्धा है कि इसका जवाब विज्ञान जो देगा, वह बाबा को मंजूर है। रात को आखिरी चीज क्या होनी चाहिए, यह साइकोलॉजी (मानस-शास्त्र) का सवाल है। रात की नींद याने इन्सान की एक दिन की मौत है। इसके बाद दूसरे दिन वह फिर से जागेगा तो नया जन्म लेगा। मौत के वक्त जो विचार बलवान होता है, उसके मुताबिक आगे गति मिलती है, ऐसा मानस-शास्त्र भी कहता है। रात को सोने के पहले सिनेमा देखें तो आँखों पर बुरे चित्रों का हमला होता है। फिर गहरी नींद नहीं आती। डिस्टर्बड् स्लीप (अस्वस्थ निद्रा) आती है। रात को सोने के पहले परमात्मा को याद करना, दिल को शान्त करना, ताकि ख्वाब न आये, गहरी नींद आये। इन दोनों में से क्या ज्यादा साइन्टिफिक (वैज्ञानिक) है?

जिन्दगी की असली जरूरतें

इस तरह विज्ञान के जमाने में जिन्दगी सादी होनेवाली है और चीजों की अहमियत ठीक से ध्यान में आनेवाली है। आज इन्सान समझता है कि जिन्दगी की अहम चीज है—सोना और मोती। वह समुद्र से मोती निकालता है और उसे कान में पहनता है। अल्ला ने कान में सूराख नहीं पैदा किया तो ये लोग सूराख बनाते हैं और मोती को सूराख नहीं होता है तो उसमें भी सूराख बनाते हैं। कान में सूराख पैदा करना याने अल्ला के लिए 'वोट ऑफ सेंसर' (अविश्वास का प्रस्ताव) है। कान फट जाय तो उसमें क्या जीनत है? लेकिन ये लोग उसे जीनत ही समझते हैं। ये चीजें विज्ञान के जमाने में टिकनेवाली नहीं हैं। जिंदगी में मोती, हीरा ये काम की चीजें नहीं हैं। अनाज, दूध, फल ये चीजें अहम हैं, जो बढ़नी चाहिए और शराब, सिगरेट जैसी चीजें घटनी चाहिए। ठंड के लिए जितना कपड़ा जरूरी है, उतना मिलना चाहिए और जो जरूरी नहीं है,

गांधीजी!

यास्काचार्य ने कहा है: "कविः क्रान्तदर्शी", जिसे क्रान्तदर्शन होता है, वैर का दर्शन होता है, सूक्ष्मदर्शन होता है, वह कवि है। इसी अर्थ में गांधीजी कवि थे। गांधीजी हमेशा यही सोचते थे कि जिन्हें मदद की सबसे प्रथम आवश्यकता है, उन्हें मदद कैसे दी जाय? इसी चिन्तन के परिणामस्वरूप चरखा निकला। उन्होंने ग्रामोद्योग, नयी तालीम, राष्ट्रभाषा, जमीन का बँटवारा आदि विषयों के सम्बन्ध में कई वर्षों पूर्व कह दिया था। इतना सब होने पर भी, उनसे इतना प्रकाश पाकर भी आज हम लड़खड़ाते हैं तो हम कितने बेवकूफ हैं! ♦♦♦

उसे छोड़ना चाहिए। अपने जिस्म की जो शर्त है, वह गलत है। विज्ञान के जमाने में यह टिकनेवाली नहीं है। इन दिनों बच्चों को नंगे नहीं रहने देते हैं, पैदा होते ही उन्हें कपड़े पहना देते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि उनके जिस्म के कुछ हिस्से को सूरज की रोशनी मिलती ही नहीं। फिर उनकी 'रिकेटी फ्रेम' बन जाती है और 'कॉड् लिव्हर आईल' पिलाना पड़ता है। कुल जिस्म को ढाँकने की बात विज्ञान के जमाने में नहीं टिकेगी। विज्ञान कहेगा कि जिस्म को खुली हवा और धूप मिलनी चाहिए।

जब मुझसे पूछा जाता है कि आपके प्लानिंग में 'स्टँडर्ड आफ लिविंग' (जीवन-स्तर) बढ़ेगा या नहीं तो मैं कहता हूँ कि यह सवाल अधूरा है। जो अच्छी चीजें हैं, उनका स्टँडर्ड बढ़ेगा और जो बुरी हैं, उनका घटेगा। विज्ञान के मुताबिक हमें गाँव-गाँव में अच्छी जिंदगी का नमूना पेश करना चाहिए। इसके लिए गाँव की जमीन की मालकियत मिटानी चाहिए और गाँव का एक कुनबा बनाना चाहिए। उसके लिए यह जरूरी नहीं कि 'कोऑपरेटिव फार्मिंग' (सहयोगी खेती) हो। गाँववाले अपनी मर्जी से चाहे जो इन्तजाम कर सकते हैं, अलग-अलग खेती कर सकते हैं, २-४ किसान इकट्ठा हो सकते हैं, या सहयोगी खेती भी कर सकते हैं। मुख्य बात यह है कि कोआपरेशन (सहयोग) का गुण जरूरी है, जिसके बिना रूहानियत और विज्ञान दोनों नहीं बढ़ेंगे। हवा, पानी और सूरज की रोशनी के समान जमीन की भी मालकियत नहीं हो सकती है, इस उसूल पर गाँव-गाँव में एक मुकम्मिल जिंदगी का नमूना पेश करना चाहिए। इधर 'वर्ल्ड स्टेट' (विश्वराज्य) रहेगा और उधर ग्रामराज्य। दोनों के बीच की कड़ियाँ 'लूज' (ढीली) हैं। ज्यादा से ज्यादा ताकत देहात में रहेगी और 'वर्ल्ड स्टेट' 'मॉरल गाइडेन्स'(नैतिक मार्गदर्शन) देगा। बीच की कड़ियाँ कोऑर्डिनेटिंग (जोड़नेवाली) होंगी।

विज्ञान और विकेन्द्रीकरण

मुख्य सवाल यह है कि क्या ऐसा होगा ? मैं कहना चाहता हूँ कि विज्ञान के जमाने में यह जरूर होगा। विज्ञान के जमाने में 'डीसेंट्रलाइज्ड पावर' (विकेन्द्रित शक्ति) हासिल होनेवाली है। वैसे बिजली भी काफी डीसेंट्रलाइज्ड (विकेन्द्रित) है, फिर भी वह कुछ सेंट्रलाइज्ड (केन्द्रित) भी है। मैं भविष्य करना चाहता हूँ—आप लिख रखिये कि आगे एटॉमिक इनर्जी (अणुशक्ति) आनेवाली है, वह गाँव-गाँव जायेगी और उसकी मदद से हम गाँव-गाँव में डीसेंट्रलाइज्ड (विकेन्द्रित) तौर पर मुकम्मिल जिन्दगी का नक्शा पेश करेंगे। उसके लिए यह जरूरी नहीं है कि ५०-१०० घरवाला छोटा-सा गाँव हो। गाँव थोड़ा बड़ा हो। इस तरह गाँव-गाँव आजाद और स्वयंपूर्ण बनेगा, तभी सच्ची आजादी आयेगी।

पण्डित लोग सेवा करें

कल की तकरीर में मैंने पण्डितों के बारे में एक मजेदार कहानी सुनायी थी 'गधे और पण्डित बीच में'। उससे कुछ पण्डितों के दिल को दुःख हुआ। वे कृपा करके मुझे मुआफ करें। यह मुझसे कभी नहीं बनेगा कि मैं किसीका दिल दुखाऊँ। यह आखिरी चीज है, जो मुझसे होगी। लेकिन 'सेन्स ऑफ ह्यूमर' (विनोद-बुद्धि) तो होना ही चाहिए, जिसके बिना जिन्दगी में मजा नहीं रहता है। इसीलिए उस कहानी की तरफ विनोद की दृष्टि से देखना चाहिए। लेकिन फिर भी उससे जिनको दुःख हुआ, उनके दिल में मैं बैठा हूँ, वे मेरे हैं, मैं उनका हूँ। यहाँकी पण्डित जमात अकलियत (अल्प-मत) में हैं। वे यहाँ महफूज हो सकते हैं। उसका एक ही तरीका है कि वे सबकी सेवा करें। मैंने पक्षियों की मिसाल देते हुए कहा था कि वह एक छोटी-सी जमात है, लेकिन उसमें सेवा करनेवाले कितने निकले। इस पर पण्डितों ने हमें लिखा कि हममें भी सेवक पैदा हुए हैं और उन्होंने पण्डित जवाहरलाल नेहरू का नाम दिया। खैर ! यहाँके पण्डितों को पण्डित जवाहरलाल पर अपना हक साबित करना है तो वे करें। वह दावा पण्डितजी को मंजूर है या नहीं, मुझे पता नहीं। पर मैं मानने को राजी हूँ। पण्डित जवाहरलाल का नाम क्यों लेते हो ? क्या मैं जानता नहीं कि कश्मीर के पण्डितों ने प्राचीन काल से बड़ी सेवा की है, बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे हैं। शैव सिद्धांत का प्रचार यहींसे हुआ है और उधर तमिलनाड से हुआ है, दोनों का देश पर असर है। शंकराचार्य यहाँके पण्डितों से चर्चा करके उन्हें विचार समझाने के लिए आये थे। यहाँके पण्डितों ने तवारीख में खूब काम किया है। लेकिन पुराने सरमाये पर काम नहीं चलेगा, नया सरमाया चाहिए, यद्यपि पुराना भी काफी है। इसीलिए मैंने पण्डितों को सलाह दी कि वे सेवा करें। लेकिन मेरे किसी शब्द से किसी का दिल दुखा हो तो वे मुझे कृपा करके मुआफ करें। ◆◆◆

[गतांक से समाप्त]

अनुक्रम

१. सर्वोदय-विचार केवल अच्छा ही नहीं, व्यावहारिक ...
श्रीनगर ३ अगस्त '५९ पृष्ठ ६०५

समाज की विवेक-बुद्धि आगे बढ़ी

आज के जमाने में हम बहुत आगे बढ़े हुए हैं और आज की 'स्पिरिच्युअल वैल्यूज' (आध्यात्मिक मूल्य) पुराने जमाने की 'स्पिरिच्युअल वैल्यूज' से बहुत आगे बढ़ी हुई हैं। महाभारत का किस्सा है। एक भरी सभा में द्रौपदी को लाया जाता है और पूछा जाता है कि क्या पांडवों का उसपर हक है तो 'भीष्म, द्रोण, विदुर भये विस्मित।' याने उस जमाने के महाज्ञानी भी उसका जवाब नहीं दे सके। इतना वह उनके लिए कठिन सवाल बन गया। लेकिन इसमें क्या कठिन है ? क्या आज इसमें किसीको कोई शक है कि खाविंद (पति) का औरत पर ऐसा हक नहीं है कि वह उसे बेच सके। लेकिन उस जमाने के महाज्ञानी, बड़े आलिम भी इसका फैसला नहीं दे सके कि क्या खाविंद अपनी औरत को बेच सकता है ? इस तरह इस जमाने का 'कॉन्शेन्स' (विवेकबुद्धि) पुराने जमाने के कॉन्शेन्स' से आगे बढ़ा हुआ है। एक सादी-सी बात लीजिये। इंग्लैण्ड ने १५० साल पहले हिन्दुस्तान पर हमला किया, उस पर कब्जा कर लिया। इस तरह इंग्लैण्ड हिन्दुस्तान को निगल गया। लेकिन वहाँकी जनता ने उसकी कोई खास मुखालिफत नहीं की। लेकिन अभी इंग्लैण्ड ने ईजिप्त पर हमला किया, तो वहाँकी जनता ने उसके खिलाफ आवाज उठायी, प्रदर्शन किये और आखिर वहाँकी हुकूमत को वह कदम वापस लेना पड़ा। यह किस्सा बता रहा है कि समाज का 'कॉन्शेन्स' किस तरह आगे बढ़ा हुआ है।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी